International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 1445-1448

पं० श्री राम दवे के खण्डकाव्यों में सनातन जीवन मूल्य, एक अध्ययन

अवधेश कुमार मिश्र
शोध छात्र (संस्कृत), कोटा विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान, भारत।

सारांश
पं० श्री राम दवे आधुनिक संस्कृत साहित्य के श्रेष्ठ कवि माने जाते है। उन्होंने तीन महाकाव्य, एकादश खण्डकाव्य तथा तीन अनूदित काव्य लिखे है। निःसन्देह उनकी समस्त काव्य कृतियाँ सर्वोष्कृष्ट है। उनका एकादश खण्डकाव्य आधुनिक संस्कृत साहित्य में अति विशिष्ट स्थान रखता है। खण्डकाव्यों में ललितालहरी, अपांगलीला तथा भारतीविलास स्रोत्रपरक काव्य है। वियोगशतकम्, कारूण्यकादम्बिनी, कामधेनुशतकम् नीतिपरक काव्य है, तथा परिखायुद्वम् कालकौतुकम् केलिभूकैतवम्, मेघोपालम्भनम् एव सौन्दर्यलीलामृतम् युग् बोधक काव्य है।
इन खण्ड काव्यों में सनातन संस्कृति के शाश्वत जीवन मूल्यों का पक्ष प्राप्त होता है जो इस शोध पत्र का विषय भी है। अतः इस शोध पत्र में मानव मूल्यो की मीमांसा के साथ ग्रन्थ में दृष्ट आध्यात्मिक,सांस्कृतिक समाजिक आदि शाश्वत जीवन मूल्यों के विषय में वर्णन किया जायेगा।

कूट शब्द : मूल्य, मानव, श्रेयस्, प्रेयस्, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, मातृमूल्य, खण्डकाव्य।

प्रस्तावना
'बड़े भाग मानुष तन पावा'[1]
वस्तुतः यदि मानव तन भाग्य है तो, जीवन–मूल्य उस मानव का सौभाग्य है, क्योंकि मूल्यों के विना जीवन का कोई अर्थ नहीं, मानवता का कोई अस्तित्व नहीं होता है। अतएव मूल्यों का संरक्षण–संवर्धन कवि मनीषियों के मानस मेदनी में सतत् सुचिंत्य विषय रहा है।
मूल्य शब्द मूल+यत् से निर्मित है जिसका अर्थ किसी वस्तु के विनिमय में दिया जाने वाला धन है।[2] विद्वानों का मानना है कि 'मूल्य' अर्थशास्त्र से व्यवहार में आया है, जो वर्तमान में नीतिपरक साहित्यों का प्रमुख विषय बन गया है। जैसा कि 'शब्दकल्पद्रुमकार' ने 'मूल्य' शब्द की व्युत्पत्ति की है ''मूल्यम् मूलेन अनाम्यते अभिभूयते, मूलेन समं वा इति'' जिसका तात्पर्य है मूल के समान अर्थात जो मूल के समान है वह मूल्य है, जो आत्मवत् है वह मूल्य है, जो शास्त्र विहित है, सदाचार निहित है, वहीं मूल्य हैं। लगभग इन्हीं अर्थों में अन्य वैदेशिक भाषाओं में भी मूल्य का प्रयोग हुआ है, अंग्रेजी में इस शब्द के लिय ''वैल्यु'' ग्रीक में 'एक्सियोज', जर्मन में वैट और फ्रांसीसी में 'वालोर'[3] का प्रयोग होता है। मूल्य का विषय क्षेत्र व्यापक होने के कारण विद्वानों के लिये इसे किसी सुनिश्चित और ऐकान्तिक परिधि में बाँधना कठिन है तथापि सुविचारकों ने उच्चतम परिभाषा प्रस्तुत की है –

> 'मूल्य वे मानवदण्ड है जो सम्पूर्ण संस्कृति और समाज को अभिप्राय और सार्थकता प्रदान करते है'[4]
> 'जो जीवन को अस्तित्व और गति प्रदान करें, वही मूल्य है'[5]

मूल्य जीवन, परिवेश, आत्मा, समाज, संस्कृति और इन सबके अलावा मानवीय अस्तित्व व अनुभूति के आदर्शात्मक व आध्यात्मिक आयाम से उद्भूत होते है।[6]
'मूल्य का सम्बन्ध मनुष्य की उत्तर जीविता और उसके अस्तित्व से है, क्योंकि उसका स्रोत और माध्यम मनुष्य ही है। अतः मनुष्य के जीवन को जीवन्तता, उत्कृष्टता तथा व्यवहार सम्बन्धी विवेक प्रदान करने वाला गुण भाव विशेष जीवन मूल्य कहलाता है। मानव मूल्य सम्बन्धी चिन्तन के बीज हमें वैदिक साहित्य में उपलब्ध तो होते है, किन्तु वहॉ 'मूल्य' शब्द का उल्लेख नहीं है, तत्सम्बन्धी धारणा अवश्य मिलती हैं। संहिता काल में ऐश्वर्य विजय तथा यशोऽभिलाषी होते हुये भी वैदिक जन नैतिकता के प्रति विमुख नही थे, उनके जीवन में नैतिकता का शासन था। इनकी आस्था 'ऋत'[7] की धारण में सन्निहित थी। ब्राह्मण काल में कर्मकाण्ड, आरण्यककाल में आध्यात्म, और उपनिषद्काल में श्रेयस् और प्रेयस् की प्राप्ति में ही जीवन मूल्य की अवधारणा थी। महात्मा बुद्ध के आविर्भाव के पश्चात् मोक्ष को चरम मूल्य माना गया, भक्ति काल में भक्ति को परम मूल्य समझा गया किन्तु सामाजिक सुधार के प्रयास में मूल्यों की महनीयता भी परिलक्षित हुयी, कबीर के काव्य प्रमाण है।
रामायण और महाभारत का काल आते आते पुरूषार्थ चतुष्ट्य को मान्यता मिली, और वे ही मानव मूल्य हो गये, वस्तुतः ये सार्वजनीन सार्वकालिक मूल्य है जिनकी भित्ति पर भारतीय जीवन प्रतिष्ठित है। धर्म में सामाजिक एवं नैतिक मूल्य आ जाते है, अर्थ का सम्बन्ध भौतिक मूल्यों से है। काम मे सौंदर्य और कला सम्बन्धी सभी मूल्य समाहित होते है और मोक्ष में आध्यात्मिक मूल्य आ जाते है। डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार धर्म सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानव मूल्य है। इसके अभाव में जीवन की सारी संगति नष्ट प्राय है।[8] अर्थ धर्म से समन्वित होना चाहिए। काम मंगल भावना से मण्डित होना चाहिए तथा मोक्ष मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य होना चाहिए। चारों पुरूषार्थों की पूर्णता में ही जीवन की सार्थकता है, पुरूषार्थ चतुष्ट्य में ही सारे मूल्य समाहित है चाहे नाम भेद कुछ भी हो।''
महादेवी वर्मा के अनुसार मूल्यों के दो रूप है। प्रथम प्रयोग रूप जो युग धर्मानुसार परिवर्तित परिवर्धित होता रहता है। द्वितीय शाश्वत रूप – जो कभी नहीं बदलते सत्य, अहिंसा, न्याय, प्रेम, स्नेह, सद्भावना, संवेदना, करुणा, बन्धुत्व, समानता आदि शाश्वत मूल्य है।[9]

> धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः
> धीर्विद्या सत्यक्रोध दशकं धर्मलक्षमणम्।।[10]

मनुस्मृतिकार ने उक्त दस शाश्वत मूल्य बताये है।
भारत में स्वंतत्रता प्राप्ति के पश्चात् लोकतांत्रिक मूल्यों की चर्चा हुई और उसे मानव जीवन मूल्य में सर्वोच्च स्थान दिया गया। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में जो न्याय, स्वतंत्रता, विश्वास, समानता तथा बन्धुत्व की चर्चा की गयी है, ये राष्ट्रीय लोकतंत्रात्मक मूल्य है।
लोकतांत्रिक मूल्यों के संरक्षण में स्वंतत्रता पश्चात् के कवि मनीषियों के साहित्यों का अनुपम योगदान रहा है। पं श्री राम दवे भी उनमें से एक है जिन्होंने अपने खण्डकाव्यों में शाश्वत और लोकतांत्रिक दोनों ही जीवन मूल्यों की स्थापना की है। पं. दवे ने समसामयिक विविधविषयक एकादश खण्डकाव्य लिखे है, जिनमें मानव की सार्वभौम संवेदनाओं को देखा जा सकता है। क्योंकि इनके काव्य का उद्देश्य मानव जीवन को उत्कर्ष प्रदान करना है। अतः इनकी कृतियों में जीवन मूल्यों को देखा जा सकता है। कवि परम्परावादी सनातनधर्मी है तथा भारतीय संस्कृति के सनातन मूल्यों में उनकी निष्ठा है। जो उनकी कृतियों में व्यंजित भी हो रहा है। अतः अधोलिखितानुसार कवि का मूल्यात्मक चिन्तन प्रस्तुत है।

1. आध्यात्मिक जीवन मूल्य

कवि की मूल प्रकृति आध्यात्मिक है। अतः उन्होंने अपने खण्ड काव्यों में आध्यात्मिक मूल्यों को सर्वोच्च स्थान दिया है। कवि का मानना है कि ये ही मूल्य मानव की उदात्त प्रवृत्तियों को उत्कर्ष तथा जीवन को विमर्श देता है। ईश्वर को प्राप्त कर अखण्डानन्द में लीन रहना ही मानव का साध्य और परम लक्ष्य है। इन्हीं आध्यात्मिक मूल्यों की अभिव्यक्ति ललिता लहरी काव्य में हुई है।

विकाराणां कारागृहमिदमुमे! मेऽस्तु नः मनः
प्रशस्त्यापाशः पततु न च कण्ठे स्तुति रिते।
समेषां कामानां त्वमसि ललिते! शेवधिपदम्,
पुनः केऽमी कामा क्षणकृत विरामास्तवपुरः।।

हे भगवती ललिते! आपसे यही प्रार्थना है कि मेरा मन विकारों का कारागृह न बने, तुम्हारी स्तुति करने वाले कण्ठ में प्रशंसा की आशा का पाश न पडे। फल की इच्छा जागृत न हो, विद्या का अभिमान न हो, पूजा में अरुचि न हो तथा अन्त में यह नश्वर शरीर भी तुम्हारी गोद में समा जाये।

न वा विद्यादर्पो भवतु न विसर्पोऽप्यवमतेः
त्वदंके देहोऽयं विलयमपि चान्ते न लभताम्।।[12]

जब श्रृंगार रस का रतिभाव भगवद् विषय बन जाता है, तब प्रभुचरणों में अनुरक्ति रखने वाले भक्तजन के प्रेम भरे हृदय में, हरि कथा एवं कीर्तन के कारण भक्ति रस प्रबल हो जाता है तो विरक्त पुरुष भी व्रजांगना के प्रेम भरे प्रसंगो में आसक्त होकर राधारमण के लीला सागर में डूब जाते है :

यदाभक्त्युद्रेको हरि मधु कथा कीर्तन भवः
उदेतिस्निग्धान्ते प्रभुचरण संसिक्त मनसः.....।।[13]

आत्म शुद्धि की कामना, मनोविकारों से मुक्ति, हृदय में प्रेम, अनासक्त कर्म रूपी मूल्यों की अनुभूतियों का उद्घाटन काव्य में किया गया है, जो भौतिक मूल्यों का अतिक्रमण करके श्रेयस् की ओर अग्रसर होता है। यह आध्यात्मिक मूल्य सुसंस्कृत मानवों के लिये ग्राह्य होता है, तथा परमपद की प्राप्ति में साधक होता है। अपांगलीला नामक खण्ड काव्य में कवि ने माना है कि आध्यात्म के भाव से ही शिष्यों में श्रद्धा, गुरूओं में गुरूता, बुधजनों में प्रज्ञा, शिशुओं में सुकुमारता, युवकों में उत्साह और वृद्धों में सौम्यता[14] जैसे नैसर्गिक मूल्यों की प्राप्ति होती है। एतदर्थ कवि का भक्ति परक काव्य अन्य मूल्यों की अपेक्षा आध्यात्मिक मूल्यों को अधिक आत्मोन्मुखी मानता है।

2. सांस्कृतिक जीवन मूल्य

प्राचीन संस्कृति के महान विचारक एवं युगीन संवेदनाओं के प्रबोधक कवियों का उद्देश्य अपने काव्य के माध्यम से भावी पीढ़ियों में अलख जगाना होता है। उनका काव्य तथ्यों का संग्रहण अथवा बुद्धि विलास का विषय नहीं होता है, वह तो उन व्यवस्थाओं को देता है जो ज्ञान और विवेक पैदा करे, सदाचारी बनाये, वसुधैव कुटुम्बकम् का भाव जगाये, तथा मानव जीवन की समग्रता का समन्वय करें। पं.श्री राम दवे की काव्य साधना इस सन्दर्भ में महीयसी है। उनके काव्यों में सांस्कृतिक मूल्यों का चिन्तन झलकता है। जो आलोक योग्य है –
भारतीय संस्कृति की सार्वभौमिक विशेषता सम्यग्–दृष्टि, सम्यग्–चरित्र की अनुपालना रही है। जिसे विश्वधरातल पर सर्वाधिक सराहा गया है। कवि दवे ने ''सौन्दर्यलीलामृतम्'' काव्य में यथा दृष्टि तथा सृष्टि की भारतीय दृष्टि को प्रकाशित करते हुये सौन्दर्य के शाश्वत स्वरूप को दिखाया है –

सौन्दर्य नहि चर्म राग निहितं नो वांऽगभंगयाश्रितम् ..... [15]
सौन्दर्यं शिव सत्य भाव सुभगं यत्कल्पितं सूरिभि ..... [16]

सौन्दर्य चर्म राग नही, ना ही वह अंगों की भंगिमा पर आश्रित व्यापार है, वह तो सत्यं शिवम् सुन्दरम् की सदाशयता पर प्रतिष्ठित तथा सम्यग् दृष्टि और सम्यग् चरित्र की चेतना से प्रवाहित होने वाला भाव है, जिसे भाव प्रज्ञा से ही साक्षात्कार किया जा सकता है। आज यह दूषित मतिकों के कारण कलुषित हो गया है, वासना दृष्टि ने इसे इन्द्रियजन्य भोग्य बना दिया है, देह पिपासुओं ने इसे चारित्रिक अपकीर्ति के योग्य बना दिया है।
कवि का मानना है कि आज की शिक्षा, संस्कृति, जीवन पद्धति, खान–पान, अभिवादन, भाषा–भूषा, सेवा और शासन आदि पाश्चात्य पद्धति के अनुसरण का प्रतिफल है, जो भारतीय मानवों को विश्वगुरुत्व गौरव की गाथा का संस्मरण करने नहीं देता, सांस्कृतिक अनुकूल वेदना से आत्मसात् नहीं होने देता है –

शिक्षा संस्कृति जीवनोत्सव विद्यौ खाद्येऽभिवादे यथा,
भाषा भाषण भूषणे भृति पदे संकल्पिते शासने।
पाश्चात्यां सरणिं मुदानुचरतां संकोच लेशोऽपि नो,
चित्ते विश्वगुरुत्व गौरव कथा स्वीया न संस्मर्यते।।[17]

गुरु शिष्यों का चरित्र भारतीय संस्कृति की विशिष्टता रही है, जो आज काल के प्रभाव से तथा पाश्चात्य प्रेम के कारण शनैःशनै धूमिल होती जा रही है कवि ने इस सांस्कृति पीड़ा को ''गुरु शिष्य सदाचरणे निरताचरणे निरतानहि भाति शिवे! ह्यधुनासुखदा।''[18] पंक्ति में व्यक्त किया है। रूप से अधिक गुणों की महत्ता के शास्त्रीय सिद्धान्तों एवं शास्त्रीय उद्देश्यों को प्रतिपादित करते हुये कवि कहना चाहते है कि –
मात्र रूप के आकर्षण की अपेक्षा भार्या में गुणों का अन्वेषण,[19] कुल की वृद्धि के निमित्त 'दुष्कुलादपि स्त्री रत्नं ग्रहणं''[20] अर्द्धांगिनी को गृहिणी का समस्त अधिकार अर्पण ''कान्यादानं महापुण्यं''[21] आदि

व्यवस्थागत मूल्य हमारी सांस्कृतिक थाती है। ''परोपकारे फलितः प्रयासः येनाशु जातः परिणाम एष''[22] परोपकार में किया गया प्रयास फलीभूत होता ही है। ''अतो में विषमे काले, वृथेयं धर्म भीरूता''[23] विषम काल में भी धर्मभीरुता व्यर्थ है की चेतना, मातृदेवो भव, धन्योगृहस्थाश्रमः, गो सेवा परमसेवा की सांस्कृतिक संवेदना को भी अभिव्यक्त किया गया है।

जिसका दूध पीकर काया सरस बनी,[24] जिसके स्नेह सिंचन से प्राण प्रदीप प्रज्ज्वलित हुये, ऐसी वात्सल्य सुधावर्षिणी, मंगलमयी, अन्नपूर्णा सी जननी, संस्कारों का आधार होती है। वहीं जन्मदात्री जब वृद्धा अवस्था में आती है, तब क्वचित् कदाचित् कलियुगी पुत्रों द्वारा उनकी उपेक्षा की जाती है, कवि उन्हें धिक्कारते[25] हुये, उन्हें वृद्धों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये का सांस्कृतिक संदेश देते है –

कामं चाक्षुष मान्द्यमस्तु न परं प्रज्ञेक्षणे मन्दता
दौर्वल्यं श्रवणेऽस्तु जीर्णवयसा नो ह्रीयते सुश्रुतम्
देहं स्याद् गलितं परं विगलितो येषां विवेको नहि
नोपेक्ष्यास्तरुणैः सदैव विषमे ज्ञानाय वृद्धः जनाः।।[26]

कवि भारतीय संस्कृति के प्रबल पक्षधर है, अतः शास्त्र विहित संस्कार और संस्कार से उत्पन्न स्वच्छ सम्बन्धों की परिपालना की अनुशंसा की है। जिसमें सत्य स्नेह, सद्भावना, करुणा और मानवीय निर्मल संवेदना आदि को समाहित करते हुये सांस्कृतिक मूल्यों को प्रसारित किया है।

3. सामाजिक जीवन मूल्य :

यह तथ्य सत्य है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है तथा उसका अस्तित्व और उसकी जीवन्तता भी समाज से ही है। सद्भाव सामंजस्य एवं शुचिता की अस्मिता भी सामाजिक गवेषणा में ही निहित है। एतदर्थ कवि मनीषियों का चिन्तन भी सामाजिक जीवन मूल्यों के संरक्षण एवं संवर्धन के ऊहा–पोह में ही लगा रहा । पं. देव की काव्य कृतियों में भी तन्निमित्तिक निदर्शन प्राप्त होता है। कवि दवे ने सामाजिक जीवन मूल्यों की आधारभूमि गृहस्थाश्रम को माना है, जहाँ सामाजिक मर्यादाओं को आत्मिकमान, सम्बन्धों की शुचिता को सम्मान, तथा चारित्रिक चित्तवृत्तियों का संविधान प्राप्त होता है।

उनके अनुसार गृहस्थ धर्म की धुरी गृहणियाँ होती है, जो अपने मूल्यों से घर को स्वर्ग बना देती है।

'स्वर्गंचक्रुः सदनमवनौ दुर्लभास्ता गृहिण्यः'[27] वस्तुतः घर से परिवार और परिवार से ही समाज की परिकल्पना होती है। घर से प्राप्त जीवन मूल्य जनित संस्कार ही सामाजिक जीवन मूल्यों की प्रवेशिका हुआ करती है। यौवन के दहलीज पर दस्तक देती हुयी स्वछन्द मनसा पुत्री को सामाजिक मर्यादा का पाठ पढ़ाती हुयी मां कहती है कि –

नित्यं नोचितमस्ति तेऽटनमिदं वत्से! तटेऽसंस्तुतैः,
तारूण्योद्धत भाव दुष्ट मतिभिः शीलानभिक्षैःश्चलैः।
स्वच्छन्दाचरणं स्त्रियांच सततं लोके न शौभावहम्,
मुंचं त्वं चलतां हि शिष्ट कुलजे। शीघ्र वरोऽन्विष्यते।।[28]

वस्तुतः स्त्रियों का स्वच्छन्दाचरण सामाजिक जीवन की शोभा नहीं होता है। सामाजिक शुचिता के लिये सामाजिक मूल्यों की अपेक्षा होती है। शिक्षा –संस्कृति–जीवन उत्सव विधि अभिवादन और शासन पद्धति को कवि ने सामाजिक जीवन मूल्य के रूप स्वीकार करते हुये भारती विलास नामक खण्ड काव्य में इस प्रकार कहा है

शिक्षा संस्कृति–जीवनोत्सव विद्यौ खाद्येऽभिवादे तथा।
भाषा भाषण भूषणे भृति पदे संकल्पिते शासने।।[29]

आचार–विचार और संस्कारों की पारदर्शिता सामाजिक मूल्यों को पुष्ट करती है। संबन्धों का संविधान हो या वृद्ध सेवा का विधान, शिशुओं का लालन हो अथवा सोलह संस्कारों का परिपालन, सामाजिक जीवन मूल्यों की बुनियाद व्यवस्थित करता है। काल के प्रभाव से दिनानुदिन सामाजिक मूल्यों के ह्रास से चिन्तित कवि की पीड़ा कारुण्यकादम्बिनी में झलकती है।

वृद्धानां चरणेषु मंगल दिने नो श्रद्धया वन्दनम्,
नो वार्शीवचनाभिलाष कलना चित्ते वधूनामपि।
नो वाचा कुशलं चिरेण मिलिताः पृच्छन्ति वैबान्धवाः,
या तास्ताः विलयं पुराक्षि विषयाः ग्रामश्रियः साम्प्रतम्।।[30]

श्रद्धा से वृद्धों को प्रणाम नहीं किया जाता, वधूएं आशीर्वादाभिलाषिनी नहीं रहीं, बन्धुजन कुशलाकांक्षी नहीं है। मानो वसन्त को वैराग्य हो गया हो, ऋतुएं वीतराग हो गयी हों, वृद्धा मां भार बन गयी हैं, अर्थहीन पिता अभिशाप बन गया है, परस्पर सद्भाव नहीं है। एकाकी परिवार, 'अयं निजः परोवेति', 'संगच्छध्वं–संवदध्वं' का अभाव आदि कवि चेतना को झकझोरता है। अतः कवि ने अपने काव्यों में सामाजिक जीवन मूल्यों के प्रति जन मानस को जागृत किया है।

4. मातृ विषयक जीवन मूल्य

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में आदर्श स्थान नारी को दिया गया है। अरून्धती, लोपमुद्रा, अनुसूया आदि को नारी विषयक मूल्य बोध की दृष्टि से आदर्श एवं अनुकरणीय माना गया है। नारी की विविध उपाधियों में सर्वाधिक समादृता माता को युगपुरुषों की प्रेरक शक्ति कहा गया है। उनके त्याग, वात्सल्य, समर्पण और बलिदान रूप जननी विषयक जीवन मूल्यों से भारतीय संस्कृति आज भी मूल्यवान् है। पं. दवे की काव्य कृति भी इन्हीं मातृ मूल्यों की महिमा से मण्डित है। उन्होंने कारुण्य कादाम्बिनी नामक खण्डकाव्य में जननी की भूमिका विषयक मूल्य बोध का जो गरिमामय वर्णन किया है। वह वर्तमान समाज व युवा पीढ़ी के लिये प्रेरणास्पद है।

भले ही जननी विषयक मूल्य बोधक खण्डकाव्य कारुण्यकादम्बिनी की रचना कवि ने अपनी माता के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिये की हो किन्तु काव्य के रूप में यह विश्व की समस्त माताओं को समर्पित भाव विशेष है।

वस्तुतः जन्मदात्री मां सहर्ष नैसर्गिक कष्टों को सहते हुये सन्तति के लिये सहज समर्पित रहती है। वह करुणा सागर की लक्ष्मी, संस्कार युक्त वाणी देने वाली शारदा तथा पौष्टिक भोजन से पुष्ट करने वाली साक्षात् अन्नपूर्णा सी होती है।[31] उनमें स्नेह, सद्भाव, सहिष्णुता तथा करुणा का भाव होता है। उनका प्रत्येकाचरण मानव मूल्यों का प्रकाश होता है। अतः मातृमूल्यों को भी शाश्वत मूल्यों की श्रेणी में रखा जाता है।

वो माँ ही होती है। जो विपरीत परिस्थिति में भी अपने पुत्रों को भिक्षा हेतु प्रेरित नहीं करती, अपितु श्रमपूर्वक जीवन निर्वाह की प्रेरणा देती है, साथ ही शिक्षा के लिये अपने आत्मज को अपनी आत्मा से दूर करती है। कवि ने इसी भाव को इन शब्दों में कहा है–

कष्टानां निशितेऽपि कंटक कुले नो भिक्षणे प्रेरितः।
शिक्षार्थं श्रम जीवनापि गृहतो दूरंच मां प्रेरयत्।।[32]

कवि के इस भाव से प्रेम–धैर्य और दृढ़ता रूप जननी विषयक मूल्यों की अनुभूति और अभिव्यक्ति हो रही है।
कवि के अनुसार मां एक जीवन मूल्य शिक्षिका होती है। वह केवल अपनी सन्तति को ही नहीं, सम्पर्क में आने वाले जनों को भी मूल्यवान् बनाने की सतत् चेष्टा करती है। वह नारियों को निज धर्म पालना हेतु प्रेरित करती है, बालकों से विनय, तरूणी से शील रक्षा तथा प्रौढों से परम्परा पालन की अपेक्षा करती है –

नारीणां निज धर्म पालन कृते यूना०चं सम्यव्रते,
बालानां विनये नवोढ़ तरूणीवर्गे च शीलत्रपाम्।
प्रोढ़ाना०च परम्परा परिचये सम्बोधनी निर्भयम्,
आसीत आ वसतौ स्वगुरूता भावेन वै शिक्षिका।।[33]

त्याग सेवा और समर्पण की प्रतिमूर्ति मां सेवा शुश्रुषा में ही परितोष का अनुभव करती है तथा परितोषात्मक मूल्यों को अपनी सन्तति में सहज समावेश कराती है।
जैसा की कवि ने कहा है कि –

शीते कन्थावृतकृशतनुः कम्बलैश्च्छादयन्ती।
ग्रीष्मे स्विन्ना व्यजनघुनितैर्नो मुदावीजयन्ती।।
शुष्कै भौज्यैरूदरभरिणी चात्मनोः नः कवोष्णैः।
नो जाने सा कति कति रूजोऽस्मत्कृते ह्य प्रसेहे।।[34]

जिसके वात्सल्य के आगे देवता, ज्ञानी, ऋषि, मुनि भी झुक जाते है, ऐसी सनातन मूल्यों की जननी, माता कभी भी किसी भी परिस्थिति में कुमाता नहीं होती चाहे पुत्र भले ही कुपुत्र हो जाय।

'नो माता परितापितापि विषमे भूयात् कुमाता परम्'[35]

उक्त प्रसंगों के माध्यम से कवि ने जननी विषयक जीवन मूल्यों के प्रति युवा पीढ़ी को सजग करने का सार्थक प्रयास किया गया है। वस्तुतः पाश्चात्य संस्कृति स्नेही वे पुत्र जो मातृ मूल्यों से अनभिज्ञ है उनके लिये कवि दवे का यह खण्डकाव्य प्रेरक है। तथा ''मातृदेवोभव'' की संकल्पना का संरक्षक तथा जननी विषयक मूल्यों का सम्पोषक है।
वस्तुतः मानव के वे उदात्त गुण जिसने मानव को मानव बनाया, वहीं मानव मानव मूल्य कहलाया किसी भी राष्ट्र का शरीर, उसकी भौतिक सम्पदा को कहा जा सकता है। किन्तु उस राष्ट्र के मानवों का जीवन मूल्य ही उसका प्राण होता है। इसलिए राष्ट्रीय संस्कृति में मानवीय मूल्यों को ही देखा जाता है। दवे राष्ट्रीय संस्कृति के सम्पोषक कवि है, एतदर्थ उन्होंने शाश्वत मूल्यों को अपनी कृतियों में दृढ़ता पूर्वक स्थापित किया है। जिसे हम आध्यात्मिक–सांस्कृतिक–सामाजिक एवं जननी विषयक मूल सिद्धान्त की अन्तश्चेतना भी कह सकते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. रामचरित मानस
2. संस्कृत हिन्दी कोष वामन शिवराम आप्टे पृ.सं. 812
3. मूल्य–मीमांसा, गोविन्द चन्द्र पाण्डेय पृ.सं. 1
4. सौन्दर्य मूल्य और मूल्यांकन, डॉ. रमेश कुन्तल मेघ पृ.सं. 3
5. इन साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका खण्ड 22 पृ.सं. 962
6. डाईमेन्शन्स ऑफ वेल्यूज, डॉ. राधाकमल मुखर्जी पृ.सं. 9
7. भारतीय संस्कृति, डॉ. देवराज पृ.सं. 5
8. धर्म और समाज, डॉ. राधाकृष्णन पृ.सं. 19
9. धर्मयुग (24 फरवरी 1980) महादेवी वर्मा पृ.सं. 25
10. मनुस्मृति : 6/92
11. ललितालहरी – 60
12. ललितालहरी – 61
13. भारतीविलास – 44
14. अपागंलीला श्लोक 27–28
15. सौन्दर्यलीलामृतम् – श्लोक 8
16. सौन्दर्यलीलामृतम् – श्लोक 3
17. कालकौतुकम् – 18
18. अपागं लीला श्लोक 11
19. केलिभूकैतवम् – 2/24
20. केलिभूकैतवम् – 2/25
21. केलिभूकैतवम् – 2/31
22. केलिभूकैतवम् – 3/3
23. केलिभूकैतवम् – 3/11
24. कारुण्यकादम्बिनी – 1
25. कारुण्यकादम्बिनी – 99
26. कारुण्यकादम्बिनी – 99
27. वियोगशतकम् – श्लोक 77
28. सौन्दर्यलीलामृतम् – श्लोक 12
29. भारती विलास – श्लोक 186
30. कारुण्यकादम्बिनी – 91
31. कारुण्यकादम्बिनी – 02
32. कारुण्यकादम्बिनी – 09
33. कारुण्यकादम्बिनी – 15
34. कारुण्यकादम्बिनी – 36
35. कारुण्यकादम्बिनी – 53